झारखंड उच्च न्यायालय, रांची

आपराधिक संशोधन संख्या 1382 / 2023

शशि भूषण चौरसिया उर्फ़ शशि भूषण चौरैया उम्र लगभग 21 वर्ष वर्ष, पुत्र श्री मनोज प्रसाद, निवासी ग्राम नगवां, पो. नरसिंहपुर, पथरा, थाना चैनपुर, जिला पलामू (झारखंड)।

.... याचिकाकर्ता

बनाम

झारखंड राज्य

.......प्रतिवादी

कोरम: माननीय श्रीमान. जस्टिस सुजीत नारायण प्रसाद

याचिकाकर्ता की ओर से : श्री ए.के. कश्यप, वरिष्ठ अधिवक्ता

राज्य की ओर से प्रतिनिधि : श्रीमती नेहला शर्मिन, विशेष पीपी

----

12 अप्रैल, 2024 को C.A.V **घोषित दिनाक 26/04/2024**

1. यह त्वरित पुनरीक्षण आवेदन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 सहपठित धारा 401 के तहत दायर किया गया है, जिसमें एसीबी मामला संख्या 09/2022 और सतर्कता मामला संख्या 09/2022 के संबंध में डाल्टनगंज में विद्वान विशेष न्यायाधीश (ए.सी.बी), पलामू द्वारा पारित दिनांक 15.09.2023 के आदेश को चुनौती दी गई है, जिसके तहत भ्रष्टाचार

निवारण (संशोधन) अधिनियम, 2018 की धारा 7(ए) के तहत अपराध के लिए याचिकाकर्ता द्वारा की गई उन्मोचन की प्रार्थना को खारिज कर दिया गया है।

<u>मामले का तथ्यात्मक सार:</u>

2. इस मामले को दायर करने से संबंधित तथ्यात्मक विवरण संक्षेप में इस प्रकार है:

निरंजन सिंह नामक व्यक्ति ने आरोप लगाया है कि दिनांक 05.08.2022 को उन्होंने अंचल अधिकारी, चैनपुर के समक्ष खाता संख्या 24, प्लॉट संख्या 34, 43, 45, 42, 46, 52 और 40 जिसका क्षेत्रफल 3.11/4 दशमलव है तथा खाता संख्या 1, 13, 18, 59, 65, 58, 106, 182, प्लॉट संख्या 440, 445, 502, 328, 439 को झारसेवा साइट पर अपलोड करने के लिए दो आवेदन दिए थे, लेकिन इसे ऑनलाइन अपडेट नहीं किया गया।

आरोप है कि जब इसे अपडेट नहीं किया गया तो सूचक ने बसरिया कला के कर्मचारी कन्हाई राम से मुलाकात की और उससे पूछा कि उसका अपडेट करने का काम आज तक क्यों नहीं किया गया, जिस पर उसने उसे अपने काम के लिए रुपये 12,000/- रिश्वत के रूप में देने को कहा, लेकिन सूचक उसे रिश्वत की राशि देने के लिए तैयार नहीं था और इसलिए उसने एसीबी कार्यालय में शिकायत दर्ज कराई। सूचक द्वारा की गई शिकायत पर, उक्त मामले को नवीन प्रसाद, पुलिस निरीक्षक, एसीबी, पलामू द्वारा 24.08.2022 को वन विभाग कार्यालय, चैनपुर के पास चल रहे आरोपी कन्हाई राम के निजी कार्यालय में सत्यापित किया गया, जहां सूचक ने आरोपी कन्हाई राम से मुलाकात की और फिर से, उसने अपने काम के लिए पैसे की मांग की। इस पर, सूचक ने रिश्वत की राशि कम करने का अनुरोध किया लेकिन आरोपी ने उससे कहा कि अगर उसे अपना काम पूरा करना है तो उसे रिश्वत की राशि देनी होगी। तत्पश्चात, सूचक ने दिनांक 12.09.2022 को सत्यापन अधिकारी को बताया कि उसके द्वारा मांगी गई रिश्वत राशि का प्रबंध कर दिया गया है तथा तदनुसार सत्यापन अधिकारी ने दिनांक 12.09.2022 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की।

इसके बाद आरोपी कन्हाई राम के खिलाफ मामला दर्ज किया गया और प्रक्रिया का पालन करते हुए एसीबी की छापेमारी टीम ने कन्हाई राम और वर्तमान याचिकाकर्ता को माता वैष्णवी कॉम्प्लेक्स, चैनपुर से रंगे हाथों पकड़ा और याचिकाकर्ता के पास से

10,000/- रुपये (500/- रुपये के मूल्यवर्ग के 20 नोट) की दागी रकम बरामद की गई क्योंकि सह-अभियुक्त कन्हाई राम ने रिश्वत की उक्त रकम को गिनने के बाद याचिकाकर्ता को सौंप दिया था और तदनुसार जब्ती सूची तैयार की गई थी। इसके बाद प्राथमिकी दर्ज की गई है।

<u>पक्षों के विद्वान वकील का तर्क</u>

3. विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के किसी भी प्रावधान को लागू करने के लिए, अनिवार्य शर्त यह है कि कोई "लोक सेवक" होना चाहिए, जिसके विरुद्ध अधिनियम लागू किया जाएगा। चूंकि याचिकाकर्ता न तो लोक सेवक है और न ही वह लोक प्राधिकारी के रूप में किसी भी कार्य का निर्वहन करने की श्रेणी में आता है, इसलिए किसी भी परिस्थिति में याचिकाकर्ता को 1988 के अधिनियम के दायरे में नहीं लाया जा सकता।

4. उन्होंने आगे कहा कि प्रतिवादी ने 2023 के निजी व्यक्ति (यहां याचिकाकर्ता) के खिलाफ अधिनियम की धारा 7 (ए) के तहत एफआईआर दर्ज करके न केवल कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग किया है, बल्कि याचिकाकर्ता की स्वतंत्रता से भी वंचित किया है, जिसे अन्यथा कानून के अनुसार ही सीमित किया जा सकता था। इस प्रकार, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील के अनुसार, प्रतिवादी ने कथित एफआईआर दर्ज करके अपने अधिकार का दुरुपयोग किया है और परिणामस्वरूप, याचिकाकर्ता की गिरफ्तारी कानून की प्रक्रिया का सरासर दुरुपयोग है, जिससे याचिकाकर्ता की स्वतंत्रता से वंचित किया गया है।

5. याचिकाकर्ता की ओर से पेश विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री ए.के. कश्यप ने यह आधार लिया है कि पीसी अधिनियम की धारा 7(ए) के तहत लिया गया संज्ञान मान्य नहीं होगा, क्योंकि याचिकाकर्ता लोक सेवक नहीं है। यह प्रस्तुत किया गया है कि धारा 7(ए) केवल लोक सेवक द्वारा किए गए अपराध के संबंध में लागू होती है।

6. दूसरी ओर, प्रतिवादी-राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान विशेष लोक अभियोजक श्रीमती नेहला शर्मिन ने प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता की ओर से यह आधार लेना गलत है कि धारा 7(ए) के तहत संज्ञान लिया गया है, हालांकि इसे 7(ए) के रूप में लिखा गया है, लेकिन एफआईआर भ्रष्टाचार निवारण (संशोधन) अधिनियम, 2018 के तहत शुरू की

गई है। मामला अलग होता अगर संज्ञान संशोधित अधिनियम से पहले लिया गया होता, जिसमें धारा 7(ए) का कोई प्रावधान नहीं है, लेकिन मामला संशोधित अधिनियम के बाद शुरू किया गया है, इसलिए धारा 7(ए) इस निष्कर्ष पर पहुंचने में कोई सहायता नहीं कर सकती है कि अभियोजन पक्ष का पूरा संस्करण दोषपूर्ण होगा।

7. यह प्रस्तुत किया गया है कि याचिकाकर्ता को प्रथम दृष्टया धारा 7(ए) के तहत अपराध करते हुए पाया गया है क्योंकि याचिकाकर्ता के खिलाफ धारा 7(ए) के तत्व अच्छी तरह से उपलब्ध हैं।

8. इसके अलावा, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता द्वारा दूसरा तर्क यह दिया गया कि रिश्वत की राशि स्वीकार नहीं की गई है, बल्कि अभियोजन एजेंसी के अनुसार केवल आरोप यह है कि याचिकाकर्ता एक ऐसे व्यक्ति के बगल में बैठा था, जो लोक सेवक है।

9. याचिकाकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील की उपरोक्त दलील के जवाब में, विद्वान राज्य वकील ने याचिकाकर्ता के खिलाफ लगाए गए आरोप का हवाला देते हुए कहा है कि वह पूरे समय सरकारी कर्मचारी के बगल में बैठा था और वह 12,000/- से 10,000/- या 2,000/- रुपये की राशि के सौदे की पूरी बातचीत सुन रहा था और उसके बाद, सरकारी कर्मचारी द्वारा लिया गया पैसा, यानी कन्हाई राम नामक व्यक्ति को याचिकाकर्ता को सौंप दिया गया, जिसने टीम द्वारा रोके जाने के समय इसे स्वीकार कर लिया और यहां तक कि वर्तमान याचिकाकर्ता के हाथ से कथित धन भी बरामद किया गया। सबूत मौजूद हैं कि कन्हाई राम और याचिकाकर्ता दोनों के हाथ गुलाबी हो गए, इसलिए, याचिकाकर्ता की ओर से यह आधार लेना गलत है कि मुकदमे को आगे बढ़ाने के लिए कोई प्रथम दृष्टया सबूत नहीं है।

10. राज्य के वकील द्वारा आगे तर्क दिया गया है कि जो भी तर्क दिया जा रहा है, उस पर आरोप-मुक्ति के स्तर पर विचार नहीं किया जा सकता, बल्कि मामले पर विचारण के स्तर पर विचार किया जाना चाहिए।

11. विद्वान राज्य अधिवक्ता ने उपरोक्त आधार पर दलील दी है कि डिस्चार्ज आवेदन को खारिज करते समय विद्वान न्यायालय द्वारा गलती नहीं कही जा सकती, क्योंकि प्रथम दृष्टया याचिकाकर्ता के खिलाफ मुकदमा चलाने का आरोप है।

<u>विश्लेषण</u>

12. पक्षों की ओर से उपस्थित विद्वान वकीलों के उपर्युक्त तर्कों के मद्देनजर, न्यायालय ने वर्तमान पुनरीक्षण याचिका के साथ-साथ आरोपित आदेश की विषय-वस्तु का भी अध्ययन किया है।

13. अभिलेख से स्पष्ट है कि अभियुक्त कन्हाई राम के विरुद्ध मामला दर्ज किया गया है तथा प्रक्रिया का पालन करते हुए एसीबी की छापामार टीम ने कन्हाई राम तथा वर्तमान याचिकाकर्ता को माता वैष्णवी कॉम्प्लेक्स, चैनपुर से रंगे हाथों पकड़ा तथा याचिकाकर्ता के पास से 10,000/- रुपये (500/- रुपये के 20 नोट) की दागी धनराशि बरामद की गई, क्योंकि सह-अभियुक्त कन्हाई राम ने रिश्वत की उक्त राशि को गिनकर याचिकाकर्ता को सौंप दिया था तथा तदनुसार जब्ती सूची तैयार की गई थी। तत्पश्चात एफआईआर दर्ज की गई है।

14. तदनुसार, अपराध का संज्ञान लिया गया है और परिणामस्वरूप, वर्तमान याचिकाकर्ता द्वारा एक डिस्चार्ज याचिका दायर की गई थी, लेकिन इसे एसीबी केस संख्या 09/2022 और सतर्कता केस संख्या 09/2022 के संबंध में डाल्टनगंज में विद्वान विशेष न्यायाधीश (एसीबी), पलामू द्वारा पारित दिनांक 15.09.2023 के आदेश द्वारा खारिज कर दिया गया था, जो कि तत्काल पुनरीक्षण आवेदन का विषय है।

15. मामले की योग्यता पर विचार करने से पहले यह न्यायालय दंड प्रक्रिया संहिता में निहित डिस्चार्ज के सिद्धांत पर चर्चा करना उचित समझता है।

16. यह अच्छी तरह से स्थापित है कि आरोप तय करने के समय साक्ष्य की सावधानीपूर्वक जांच की आवश्यकता नहीं है, हालांकि साक्ष्य को कम से कम इस बात के लिए जांचा या तौला जा सकता है कि मामले में आरोप तय करने के लिए प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं। इसके अलावा ट्रायल कोर्ट को ट्रायल चलाने के उद्देश्य से साक्ष्य पर चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है, लेकिन रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्रियों की चर्चा न्यायिक दिमाग के आवेदन को दर्शाने के लिए आवश्यक है ताकि यह पता लगाया जा सके कि याचिकाकर्ता के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला बनता है।

17. कानून का यह स्थापित अर्थ है कि आरोप तय करने के चरण में, अभियुक्त के संभावित बचाव पर विचार नहीं किया जाना चाहिए और विचार के लिए प्रासंगिक सामग्री, प्रथम सूचना रिपोर्ट में लगाए गए आरोप, संहिता की धारा 161(3) के तहत जांच के दौरान दर्ज किए गए गवाहों के बयान, जिन दस्तावेजों पर अभियोजन पक्ष निर्भर करता है और संहिता की धारा 173(2) के तहत प्रस्तुत पुलिस रिपोर्ट है। बचाव के सत्यापन योग्य मूल्य का परीक्षण मुकदमे के चरण में किया जाना चाहिए न कि आरोप तय करने के चरण में और आरोप तय करने के चरण में साक्ष्य की सूक्ष्म जांच नहीं की जानी चाहिए और बहुत मजबूत संदेह पर भी आरोप तय किए जा सकते हैं।

18. इसके अलावा कानून की यह स्थापित स्थिति है कि आरोप तय करने के चरण में, ट्रायल कोर्ट को रिकॉर्ड पर उपलब्ध सामग्री की सावधानीपूर्वक जांच करने और उसे संयोजित करने की आवश्यकता नहीं है कि क्या आरोपी के खिलाफ पर्याप्त सामग्री है जिसके परिणामस्वरूप अंततः दोषसिद्धि होगी। न्यायालय को प्रथम दृष्टया यह विचार करने की आवश्यकता है कि क्या आरोपी के खिलाफ अपराध के होने का अनुमान लगाने के लिए पर्याप्त सामग्री है। अपराध के होने के बारे में मजबूत संदेह भी आरोप तय करने के लिए पर्याप्त है, आरोपी के दोषी या निर्दोष होने का निर्धारण सबूत पेश किए जाने के बाद ट्रायल के समापन के समय किया जाना चाहिए न कि आरोप तय करने के चरण में और इसलिए, आरोप तय करने के चरण में, न्यायालय को सामग्री को छांटने और तौलने के उद्देश्य से विस्तृत जांच करने की आवश्यकता नहीं है।

19. तमिलनाडु राज्य के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के समक्ष निर्वहन का मुद्दा विषय वस्तु था, सतर्कता और **भ्रष्टाचार निरोधक पुलिस निरीक्षक बनाम एन सुरेश राजन और अन्य, (2014) 11 एससीसी 709**, जिसमें पैराग्राफ संख्या 29, 32.4, 33 और 34 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की थी:

> *"**29.** हमने प्रतिद्वंद्वी दलीलों पर विचार किया है और श्री रंजीत कुमार द्वारा की गई दलीलें हमारी प्रशंसा करती हैं। <u>यह सच है कि डिस्चार्ज के लिए आवेदनों पर विचार करते समय, न्यायालय अभियोजन पक्ष के मुखपत्र या डाकघर के रूप में कार्य नहीं कर सकता है और यह पता लगाने के लिए साक्ष्यों की छानबीन कर सकता है कि लगाए गए आरोप निराधार हैं या नहीं, ताकि डिस्चार्ज का आदेश</u>*

पारित किया जा सके। यह सामान्य बात है कि डिस्चार्ज के लिए आवेदन पर विचार करने के चरण में, न्यायालय को यह मानकर आगे बढ़ना होता है कि अभियोजन पक्ष द्वारा रिकॉर्ड पर लाई गई सामग्री सत्य है और उक्त सामग्री और दस्तावेजों का मूल्यांकन इस उद्देश्य से करना होता है कि यह पता लगाया जा सके कि क्या उनसे उभरने वाले तथ्य उनके अंकित मूल्य पर कथित अपराध का गठन करने वाले सभी तत्वों के अस्तित्व को प्रकट करते हैं। इस चरण में, सामग्री के सत्यापन मूल्य पर विचार किया जाना चाहिए और न्यायालय से मामले की गहराई में जाने और यह मानने की अपेक्षा नहीं की जाती है कि सामग्री दोषसिद्धि की गारंटी नहीं देती है। हमारी राय में, जिस बात पर विचार करने की आवश्यकता है वह यह है कि क्या यह मानने का कोई आधार है कि अपराध किया गया है और यह नहीं कि क्या अभियुक्त को दोषी ठहराने का कोई आधार बनाया गया है। दूसरे शब्दों में कहें तो, अगर अदालत को लगता है कि अभियुक्त ने रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री के आधार पर अपराध किया है, तो वह आरोप तय कर सकती है; हालांकि दोषसिद्धि के लिए अदालत को इस निष्कर्ष पर पहुंचना होगा कि अभियुक्त ने अपराध किया है। कानून इस स्तर पर मिनी ट्रायल की अनुमति नहीं देता है।

32.4. आरोपित आदेश पारित करते समय [एन. सुरेश राजन बनाम पुलिस निरीक्षक, आपराधिक पुनरीक्षण केस (एमडी) संख्या ५२८ २२/२००९, आदेश दिनांक १०-१२-२०१० (मैड)], [राज्य बनाम के. पोनमुडी, (२००७) १ एमएलजे (क्रि) १००], अदालत ने यह पता लगाने के उद्देश्य से सामग्री की छानबीन नहीं की है कि आरोपी के खिलाफ आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं, बल्कि यह पता लगाया है कि क्या इससे दोषसिद्धि होगी। हमारा मानना है कि यह वह चरण नहीं था जहां अदालत को सबूतों का मूल्यांकन करना चाहिए था और आरोपी को बरी कर देना चाहिए था, मानो वह बरी करने का आदेश पारित कर रही हो। इसके अलावा, जांच में दोष अपने आप में बरी करने का आधार नहीं हो सकता। हमारी राय में, आरोपित आदेश [एन. सुरेश राजन बनाम पुलिस निरीक्षक, आपराधिक पुनरीक्षण वाद (एमडी) संख्या 528/2009, आदेश दिनांक 10-12-2010 (मैड)] में गंभीर त्रुटि है तथा इसमें सुधार की आवश्यकता है।

33.	*इस निर्णय में हमारे द्वारा की गई कोई भी टिप्पणी इन अपीलों के निपटान के उद्देश्य से है और इसका मुकदमे पर कोई असर नहीं होगा। जीवित प्रतिवादियों को 3-2-2014 को संबंधित न्यायालयों के समक्ष उपस्थित होने का निर्देश दिया जाता है। न्यायालय कानून के अनुसार आरोप के चरण से मुकदमे को आगे बढ़ाएगा और इसे शीघ्रता से निपटाने का प्रयास करेगा।*

34.	*परिणामस्वरूप, हम इन अपीलों को स्वीकार करते हैं और उपरोक्त टिप्पणियों के साथ निर्वहन के आदेश को रद्द करते हैं।"*

20. **असीम शरीफ बनाम राष्ट्रीय जांच एजेंसी, (2019) 7 एससीसी 148** के मामले में आगे कहा गया है कि आरोप तय करने के समय रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों को इकट्ठा करने के उद्देश्य से ट्रायल कोर्ट द्वारा मिनी ट्रायल की अपेक्षा नहीं की जाती है। उक्त निर्णय के पैराग्राफ संख्या 18 में कहा गया है कि:

"18. इस न्यायालय द्वारा निर्धारित विषय पर कानून की व्याख्या को ध्यान में रखते हुए, यह तय है कि सत्र मामलों में धारा 227 सीआरपीसी के तहत आरोप तय करने के सवाल पर विचार करते समय न्यायाधीश (जो वारंट मामलों से संबंधित धारा 239 सीआरपीसी के समान है) के पास यह पता लगाने के सीमित उद्देश्य के लिए सबूतों को छानने और तौलने का निस्संदेह अधिकार है कि अभियुक्त के खिलाफ प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं; जहां अदालत के सामने पेश की गई सामग्री अभियुक्त के खिलाफ गंभीर संदेह प्रकट करती है जिसे ठीक से स्पष्ट नहीं किया गया है, अदालत आरोप तय करने में पूरी तरह से न्यायसंगत होगी; कुल मिलाकर अगर दो दृष्टिकोण संभव हैं और उनमें से एक केवल संदेह को जन्म देता है, जैसा कि अभियुक्त के खिलाफ गंभीर संदेह से अलग है, तो ट्रायल जज उसे आरोपमुक्त करने में न्यायसंगत होगा। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि धारा 227 सीआरपीसी के तहत दायर डिस्चार्ज आवेदन की जांच करते समय, ट्रायल जज से यह अपेक्षा की जाती है कि वह यह निर्धारित करने के लिए अपने न्यायिक दिमाग का प्रयोग करेगा कि ट्रायल के लिए मामला बनता है या नहीं। यह सच है कि ऐसी कार्यवाही में अदालत से यह अपेक्षा नहीं की जाती कि वह रिकॉर्ड पर मौजूद साक्ष्यों को व्यवस्थित करके लघु सुनवाई करे।"

21. कानून की यह भी स्थापित स्थिति है कि आरोप तय करने के चरण में गुण-दोष के आधार पर बचाव पर विचार नहीं किया जाना चाहिए और यह आरोप मुक्त करने का आधार नहीं हो सकता। माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **राजस्थान राज्य बनाम अशोक कुमार कश्यप, (2021) 11 एससीसी 191** में दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है। तत्पर संदर्भ के लिए उक्त निर्णय के पैराग्राफ संख्या 10 से 17 नीचे उद्धृत किए गए हैं:

*"**10.** आरोपित निर्णय [अशोक कुमार कश्यप बनाम राजस्थान राज्य, 2018 एससीसी ऑनलाइन राज 3468] और आदेश द्वारा, उच्च न्यायालय ने अपने पुनरीक्षण अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए, पीसी अधिनियम की धारा 7 के तहत आरोपी के खिलाफ आरोप तय करने वाले विद्वान विशेष न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश को रद्द कर दिया है और परिणामस्वरूप आरोपी को उक्त अपराध के लिए दोषमुक्त कर दिया है। आरोपी को दोषमुक्त करते समय उच्च न्यायालय ने जो कुछ भी ध्यान में रखा है, वह आरोपित निर्णय [अशोक कुमार कश्यप बनाम राजस्थान राज्य, 2018 एससीसी ऑनलाइन राज 3468] और आदेश के पैरा 10 और 11 में बताया गया है, जिन्हें ऊपर पुनः प्रस्तुत किया गया है।*

***11.** आरोपित निर्णय [अशोक कुमार कश्यप बनाम राजस्थान राज्य, 2018 एससीसी ऑनलाइन राज 3468] और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश की वैधानिकता पर विचार करते समय, विषय पर कानून और इस न्यायालय के कुछ निर्णयों को संदर्भित किया जाना आवश्यक है।*

***11.1.** पी. विजयन [पी. विजयन बनाम केरल राज्य, (2010) 2 एससीसी 398: (2010) 1 एससीसी (क्रि) 1488] में, इस न्यायालय को सीआरपीसी की धारा 227 पर विचार करने का अवसर मिला था। आरोप तय करने और/या डिस्चार्ज आवेदन पर विचार करते समय क्या विचार किया जाना आवश्यक है, इस पर उक्त निर्णय में विस्तार से विचार किया गया है। यह देखा गया है और माना गया है कि धारा 227 के स्तर पर, न्यायाधीश को केवल यह पता लगाने के लिए सबूतों को छांटना है कि आरोपी के खिलाफ कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं। यह देखा गया है कि दूसरे शब्दों में, आधारों की पर्याप्तता में पुलिस द्वारा दर्ज किए गए*

सबूतों की प्रकृति या अदालत के समक्ष पेश किए गए दस्तावेज शामिल होंगे जो स्पष्ट रूप से खुलासा करते हैं कि आरोपी के खिलाफ आरोप तैयार करने के लिए संदिग्ध परिस्थितियां हैं। यह भी कहा गया है कि यदि न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त आधार हैं, तो वह धारा 228 सीआरपीसी के तहत आरोप तय करेगा, यदि नहीं, तो वह आरोपी को आरोपमुक्त कर देगा। यह भी कहा गया है कि अभियोजन पक्ष द्वारा मुकदमे के लिए मामला बनाया गया है या नहीं, यह निर्धारित करने के लिए मामले के तथ्यों पर अपने न्यायिक दिमाग का प्रयोग करते समय, अदालत के लिए मामले के पक्ष और विपक्ष में प्रवेश करना या सबूतों और संभावनाओं का वजन और संतुलन करना आवश्यक नहीं है, जो वास्तव में अदालत का कार्य है, मुकदमा शुरू होने के बाद।

***11.2.** एमआर हिरेमठ [कर्नाटक राज्य बनाम एमआर हिरेमठ, (2019) 7 एससीसी 515: (2019) 3 एससीसी (क्रि) 109: (2019) 2 एससीसी (एल एंड एस) 380] में इस न्यायालय के हालिया फैसले में, बेंच की ओर से बोलने वाले हममें से एक (डीवाई चंद्रचूड़, जे.) ने पैरा 25 में निम्नानुसार अवलोकन और निर्णय दिया है: (एससीसी पृष्ठ 526)*

> *"**25.** उच्च न्यायालय [एमआर हिरेमथ बनाम राज्य, 2017 एससीसी ऑनलाइन कर 4970] को इस तथ्य का संज्ञान लेना चाहिए था कि ट्रायल कोर्ट धारा 239 सीआरपीसी के प्रावधानों के तहत डिस्चार्ज के लिए आवेदन पर विचार कर रहा था। इस अधिकार क्षेत्र के प्रयोग को नियंत्रित करने वाले मापदंडों को इस न्यायालय के कई निर्णयों में अभिव्यक्ति मिली है। यह कानून का एक स्थापित सिद्धांत है कि डिस्चार्ज के लिए आवेदन पर विचार करने के चरण में अदालत को यह मानकर आगे बढ़ना चाहिए कि अभियोजन पक्ष द्वारा रिकॉर्ड पर लाई गई सामग्री सत्य है और यह निर्धारित करने के लिए सामग्री का मूल्यांकन करना चाहिए कि क्या सामग्री से उभरने वाले तथ्य, उसके अंकित मूल्य पर, अपराध का गठन करने के लिए आवश्यक तत्वों के अस्तित्व का खुलासा करते हैं। स्टेट ऑफ़ टीएन बनाम एन. सुरेश राजन [स्टेट ऑफ़ टीएन बनाम एन. सुरेश राजन, (२०१४) ११ एससीसी ७०९:*

(२०१४) ३ एससीसी (क्रि) ५२९: (२०१४) २ एससीसी (एल एंड एस) ७२१] में, इस विषय पर पहले के फैसलों को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय ने माना : (एससीसी पृष्ठ ७२१-२२, पैरा २९) '२९. ... इस स्तर पर, सामग्री के सत्यापन योग्य मूल्य पर जाना होगा और अदालत से इस मामले में गहराई से जाने और यह मानने की उम्मीद नहीं की जाती है कि सामग्री दोषसिद्धि की गारंटी नहीं देगी। हमारी राय में, जिस बात पर विचार करने की जरूरत है वह यह है कि क्या यह मानने का कोई आधार है कि अपराध किया गया है और यह नहीं कि क्या अभियुक्त को दोषी ठहराने का आधार बनाया गया है। दूसरे शब्दों में कहें तो, अगर अदालत को लगता है कि अभियुक्त ने रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री के सत्यापन योग्य मूल्य के आधार पर अपराध किया होगा, तो वह आरोप तय कर सकती है; हालांकि दोषसिद्धि के लिए अदालत को इस निष्कर्ष पर पहुंचना होगा कि आरोपी ने अपराध किया है। कानून इस स्तर पर मिनी ट्रायल की अनुमति नहीं देता है।'"

12. *अब हम ऊपर बताए गए सिद्धांतों को वर्तमान मामले में लागू करेंगे ताकि यह पता लगाया जा सके कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर, उच्च न्यायालय द्वारा पीसी अधिनियम की धारा 7 के तहत अपराध के लिए अभियुक्त को दोषमुक्त करना न्यायोचित था या नहीं।*

13. *उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए तर्क और अभियुक्त को बरी करते समय उच्च न्यायालय द्वारा तौले गए आधारों पर विचार करने के बाद, हम इस राय पर पहुँचे हैं कि उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए अपने अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण किया है और धारा 227/239 सीआरपीसी के दायरे से बाहर जाकर काम किया है। अभियुक्त को बरी करते समय, उच्च न्यायालय ने मामले के गुण-दोष पर विचार किया है और इस बात पर विचार किया है कि रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री के आधार पर अभियुक्त को दोषी ठहराया जा सकता है या नहीं। उपरोक्त के लिए, उच्च न्यायालय ने शिकायतकर्ता और अभियुक्त के बीच हुई बातचीत की प्रतिलिपि पर विस्तार से विचार किया है, जिसका प्रयोग इस स्तर पर*

बरी करने के आवेदन और/या आरोप तय करने पर विचार करने के लिए बिल्कुल भी स्वीकार्य नहीं है।

14. *जैसा कि विद्वान विशेष न्यायाधीश ने आरोप तय करने के चरण में सही ढंग से कहा और माना, यह देखा जाना चाहिए कि प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं और आरोपी के बचाव पर विचार नहीं किया जाना चाहिए। शिकायतकर्ता और आरोपी के बीच बातचीत की प्रतिलिपि सहित रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री पर विचार करने के बाद, विद्वान विशेष न्यायाधीश ने पाया कि पीसी अधिनियम की धारा 7 के तहत कथित अपराध का प्रथम दृष्टया मामला बनता है, इसलिए आरोपी के खिलाफ उक्त अपराध के लिए आरोप तय किया। उच्च न्यायालय ने प्रतिलिपि पर विस्तार से विचार करने और यह विचार करने के अभ्यास को नकारने में भौतिक रूप से गलती की कि क्या रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्री के आधार पर आरोपी को पीसी अधिनियम की धारा 7 के तहत अपराध के लिए दोषी ठहराया जा सकता है या नहीं।*

15. *जैसा कि ऊपर उल्लेख किया गया है, उच्च न्यायालय को यह विचार करना था कि प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं और क्या अभियुक्त पर आगे मुकदमा चलाने की आवश्यकता है या नहीं। आरोप तय करने और/या डिस्चार्ज आवेदन पर विचार करने के चरण में, मिनी ट्रायल की अनुमति नहीं है। इस चरण में, यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि पीसी अधिनियम की धारा 7 के अनुसार, यहां तक कि प्रयास भी अपराध माना जाता है। इसलिए, उच्च न्यायालय ने डिस्चार्ज आवेदन के चरण में वस्तुतः मिनी ट्रायल आयोजित करके गलती की है और/या सीमा पार कर ली है।*

16. *हम मामले के गुण-दोष और/या प्रतिलेख के गुण-दोष पर आगे नहीं बढ़ रहे हैं क्योंकि इस पर सुनवाई के समय विचार किया जाना आवश्यक है। आरोप तय करने के चरण में और/या आरोप-मुक्ति आवेदन के चरण में गुण-दोष के आधार पर बचाव पर विचार नहीं किया जाना चाहिए।*

__17.__ उपरोक्त के मद्देनजर और ऊपर बताए गए कारणों से, आरोपित निर्णय [अशोक कुमार कश्यप बनाम राजस्थान राज्य, 2018 एससीसी ऑनलाइन राज 3468] और उच्च न्यायालय द्वारा पारित आदेश जिसमें पीसी अधिनियम की धारा 7 के तहत आरोपी को बरी किया गया है, कानून में टिकने योग्य नहीं है और इसे रद्द करने और अलग रखने लायक है और तदनुसार इसे रद्द और अलग रखा जाता है और विद्वान विशेष न्यायाधीश द्वारा पीसी अधिनियम की धारा 7 के तहत आरोपी के खिलाफ आरोप तय करने के आदेश को बहाल किया जाता है। अब इस मामले को पीसी अधिनियम की धारा 7 के तहत अपराध के लिए सक्षम न्यायालय द्वारा कानून और इसकी अपनी योग्यता के अनुसार चलाया जाना है।

22. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **ओंकार नाथ मिश्रा एवं अन्य बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली) एवं अन्य [(2008) 2 एससीसी 561]** के मामले में आरोप तय करने के उचित आधार पर आगे विचार किया है, जिसमें पैराग्राफ 11, 12 और 14 में निम्नानुसार माना गया है:

"__11.__ यह सामान्य बात है कि आरोप तय करने के चरण में न्यायालय को अभिलेख पर मौजूद सामग्री और दस्तावेजों का मूल्यांकन करना होता है, ताकि यह पता लगाया जा सके कि क्या उनसे उभरने वाले तथ्य, उनके अंकित मूल्य पर, कथित अपराध के सभी तत्वों के अस्तित्व का खुलासा करते हैं। उस चरण में, न्यायालय से अभिलेख पर मौजूद सामग्री के सत्यापन मूल्य में गहराई से जाने की अपेक्षा नहीं की जाती है। इस बात पर विचार करने की आवश्यकता है कि क्या यह मानने का कोई आधार है कि अपराध किया गया है और अभियुक्त को दोषी ठहराने का कोई आधार नहीं है। उस चरण में, सामग्री पर आधारित मजबूत संदेह भी, जो न्यायालय को कथित अपराध के तथ्यात्मक तत्वों के अस्तित्व के बारे में एक अनुमानात्मक राय बनाने के लिए प्रेरित करता है, उस अपराध के संबंध में अभियुक्त के खिलाफ आरोप तय करने को उचित ठहराएगा।

12. __कर्नाटक राज्य बनाम एल. मुनिस्वामी [(1977) 2 एससीसी 699: 1977 एससीसी (सीआरआई) 404]__ में, इस न्यायालय की तीन न्यायाधीशों की पीठ ने टिप्पणी की थी कि आरोप तय करने के चरण में, न्यायालय को इस प्रश्न पर

विचार करना होगा कि अभियुक्त द्वारा अपराध किए जाने की धारणा के लिए कोई आधार है या नहीं। चूंकि आरोप तय करने से व्यक्ति की स्वतंत्रता पर काफी हद तक असर पड़ता है, इसलिए इस तरह के आदेश की गारंटी देने वाली सामग्री पर उचित विचार करने की आवश्यकता पर जोर दिया गया।

14. मध्य प्रदेश राज्य बनाम मोहनलाल सोनी [(2000) 6 एससीसी 338: 2000 *एससीसी (क्रि) 1110] में बाद के फैसले में इस न्यायालय ने कई पिछले फैसलों का हवाला देते हुए कहा कि: (एससीसी पृष्ठ 342, पैरा 7)*

> *"7. स्पष्ट न्यायिक दृष्टिकोण यह है कि आरोप तय करने के चरण में, न्यायालय को प्रथम दृष्टया यह विचार करना होगा कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं। न्यायालय को यह निष्कर्ष निकालने के लिए साक्ष्य की सराहना करने की आवश्यकता नहीं है कि प्रस्तुत सामग्री अभियुक्त को दोषी ठहराने के लिए पर्याप्त है या नहीं।"*

23. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **पलविंदर सिंह बनाम बलविंदर सिंह एवं अन्य (2009) 3 एससीसी (सीआरआई) 850** के मामले में यह माना है कि प्रबल संदेह के आधार पर भी आरोप तय किए जा सकते हैं। उस समय साक्ष्यों का संग्रह और मूल्यांकन न्यायालय के अधिकार क्षेत्र में नहीं है।

24. इसके अलावा यहाँ यह उल्लेख करना उचित है कि अभियुक्त को बरी करने की शक्ति को कठिन मुकदमे या अभियोजन की कठिन परीक्षा द्वारा किसी निर्दोष व्यक्ति को परेशान होने से बचाने के लिए डिज़ाइन किया गया था। उस इरादे को कैसे हासिल किया जाना है, यह धारा में ही स्पष्ट रूप से स्पष्ट है। यह शक्ति सत्र न्यायाधीश को सौंपी गई है जो आपराधिक मुकदमों में अपने ज्ञान और अनुभव का उपयोग करता है। इसके अलावा, उसके पास अभियुक्त के वकील और सरकारी वकील की सहायता होती है। अभियुक्त के खिलाफ़ कोई आरोप तय करने या उसे बरी करने से पहले उसे दोनों पक्षों को सुनना ज़रूरी है। अगर सत्र न्यायाधीश पक्षों को सुनने के बाद आरोप तय करता है और उसके समर्थन में कोई आदेश भी देता है, तो कानून को अपना काम करने दिया जाना चाहिए। जब तक कि कोई स्पष्ट अन्याय न हो जो अदालत के सामने हो, तब

तक उच्च न्यायालय की ओर से आत्म-संयम नियम होना चाहिए। किसी भी मामले पर राय उस व्यक्ति के आधार पर भिन्न हो सकती है जो इसे देखता है। किसी विशेष मामले पर जितनी अदालतें हैं, उतनी ही राय हो सकती हैं, लेकिन उच्च न्यायालय के लिए मुकदमे पर रोक लगाने का कोई आधार नहीं है। उच्च न्यायालय के लिए बेहतर होगा कि वह मुकदमे को आगे बढ़ने दे। इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **स्त्री अत्याचार विरोधी परिषद बनाम दिलीप नाथूमल चोर्डिया, (1989) 1 एससीसी 715** में दिए गए निर्णय से संदर्भ लिया जा सकता है।

25. हाल ही में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय की पूर्ण पीठ ने **गुलाम हसन बेग बनाम मोहम्मद मकबूल माग्रे, (2022) 12 एससीसी 657 के मामले में आरोप तय करने के मुद्दे पर विस्तार से चर्चा** की है और पैराग्राफ 27 में निम्नलिखित निर्णय दिया है:

> *"27. इस प्रकार, उपर्युक्त से यह स्पष्ट है कि ट्रायल कोर्ट को आरोप तय करते समय अपने विवेक का प्रयोग करने का कर्तव्य सौंपा गया है और उसे केवल डाकघर के रूप में कार्य नहीं करना चाहिए। पुलिस द्वारा प्रस्तुत आरोप-पत्र पर बिना विवेक का प्रयोग किए तथा अपनी राय के समर्थन में संक्षिप्त कारण दर्ज किए बिना पृष्ठांकन करना कानून द्वारा समर्थित नहीं है। हालांकि, आरोप तय करते समय न्यायालय द्वारा जिस सामग्री का मूल्यांकन किया जाना अपेक्षित है, वह वह सामग्री होनी चाहिए जिसे अभियोजन पक्ष द्वारा प्रस्तुत किया गया हो तथा जिस पर भरोसा किया गया हो। ऐसी सामग्री की छानबीन इतनी सावधानी से नहीं की जानी चाहिए कि यह अभ्यास अभियुक्त के अपराध या अन्यथा का पता लगाने के लिए एक छोटा परीक्षण बन जाए। इस चरण में केवल इतना ही अपेक्षित है कि न्यायालय को संतुष्ट होना चाहिए कि अभियोजन पक्ष द्वारा एकत्र किए गए साक्ष्य यह मानने के लिए पर्याप्त हैं कि अभियुक्त ने अपराध किया है। यहां तक कि एक मजबूत संदेह भी पर्याप्त होगा। निस्संदेह, धारा 173सीआरपीसी के तहत अभियोजन पक्ष द्वारा अंतिम रिपोर्ट के रूप में अदालत के समक्ष रखी गई सामग्री के अलावा, अदालत किसी अन्य साक्ष्य या सामग्री पर भी भरोसा कर सकती है जो उत्कृष्ट गुणवत्ता की हो और अभियोजन पक्ष द्वारा उसके समक्ष लगाए गए आरोप से सीधे संबंधित हो।*

26. इस प्रकार, उपर्युक्त कानूनी प्रस्तावों से यह सुरक्षित रूप से अनुमान लगाया जा सकता है कि यदि मामले के रिकॉर्ड और उसके साथ प्रस्तुत दस्तावेजों पर विचार करने के बाद, और इस संबंध में अभियुक्त और अभियोजन पक्ष की दलीलों को सुनने के बाद, न्यायाधीश को लगता है कि अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार नहीं है, तो वह अभियुक्त को उन्मुक्त कर देगा और ऐसा करने के लिए उसके कारणों को दर्ज करेगा और यदि, उपर्युक्त विचार और सुनवाई के बाद, न्यायाधीश की राय है कि यह मानने का आधार है कि अभियुक्त ने कोई अपराध किया है, तो ट्रायल कोर्ट आरोप तय करेगा। इसलिए, उन्मुक्ति का चरण आरोप तय करने से पहले का चरण है और एक बार जब न्यायालय उन्मुक्ति आवेदन को खारिज कर देता है, तो वह आरोप तय करने के लिए आगे बढ़ेगा। आरोप-मुक्ति के चरण में, न्यायाधीश को केवल साक्ष्यों की छानबीन और मूल्यांकन करना होता है, ताकि यह पता लगाया जा सके कि अभियुक्त के विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार है या नहीं, दूसरे शब्दों में, आधारों की पर्याप्तता में पुलिस द्वारा दर्ज किए गए साक्ष्य या अदालत के समक्ष प्रस्तुत किए गए दस्तावेजों की प्रकृति शामिल होगी, जो स्पष्ट रूप से यह प्रकट करते हैं कि अभियुक्त के विरुद्ध संदेहास्पद परिस्थितियां हैं, जिससे उसके विरुद्ध आरोप तय किया जा सके, और उसके बाद यदि न्यायाधीश इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि कार्यवाही करने के लिए पर्याप्त आधार हैं, तो वह आरोप तय करेगा और यदि नहीं, तो वह अभियुक्त को आरोप-मुक्त कर देगा।

27. अभियोजन पक्ष द्वारा मुकदमे के लिए मामला बनाया गया है या नहीं, यह निर्धारित करने के लिए मामले के तथ्यों पर अपने न्यायिक दिमाग का प्रयोग करते समय, न्यायालय के लिए मामले के पक्ष और विपक्ष में प्रवेश करना या साक्ष्य और संभावनाओं का वजन और संतुलन करना आवश्यक नहीं है, जो वास्तव में न्यायालय का कार्य है, मुकदमा शुरू होने के बाद। यह माना जाता है कि वर्तमान मामले के इस चरण में, न्यायालय को केवल यह विचार करने की आवश्यकता थी कि क्या प्रथम दृष्टया मामला बना है या नहीं और क्या अभियुक्त पर आगे मुकदमा चलाने की आवश्यकता है या नहीं, क्योंकि आरोप तय करने और/या डिस्चार्ज आवेदन पर विचार करने के चरण में, मिनी ट्रायल की अनुमति नहीं है।

28. उपर्युक्त मामले कानूनों और न्यायिक अनुमान की पृष्ठभूमि में, यह न्यायालय अब इस तथ्य की जांच करने के लिए आगे बढ़ रहा है ताकि इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सके कि क्या जांच के दौरान एकत्र किए गए साक्ष्य और रिकॉर्ड पर लाए गए साक्ष्य, जैसा कि आरोपित आदेश में उपलब्ध होगा, प्रथम दृष्टया मामला बनता है या नहीं?

29. यह न्यायालय अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य की संवीक्षा करना उचित एवं उपयुक्त समझता है।

30. उपलब्ध अभिलेखों से यह स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता के विरुद्ध विशेष आरोप है कि वर्तमान याचिकाकर्ता को माता वैष्णवी कॉम्प्लेक्स, चैनपुर से रंगे हाथों पकड़ा गया तथा उसके पास से 10,000/- रुपये (500/- रुपये के 20 नोट) की राशि बरामद की गई, क्योंकि सह-अभियुक्त कन्हाई राम ने रिश्वत की राशि गिनने के पश्चात याचिकाकर्ता को सौंप दी थी तथा तदनुसार जब्ती सूची तैयार की गई थी। तत्पश्चात एफआईआर दर्ज की गई है।

31. संशोधनकर्ता के विद्वान वरिष्ठ वकील का सबसे प्रमुख तर्क यह है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 के उक्त प्रावधान को लागू करने के लिए, आवश्यक शर्त यह है कि कोई "लोक सेवक" होना चाहिए, जिसके विरुद्ध अधिनियम लागू किया जाएगा। चूंकि याचिकाकर्ता न तो लोक सेवक हैं और न ही वे लोक प्राधिकारी के रूप में किसी भी कार्य का निर्वहन करने की श्रेणी में आते हैं, इसलिए किसी भी परिस्थिति में याचिकाकर्ता को 1988 के अधिनियम के दायरे में नहीं लाया जा सकता है और प्रतिवादी ने निजी व्यक्ति (यहां याचिकाकर्ता) के विरुद्ध अधिनियम की धारा 7(ए) के तहत एफआईआर दर्ज करके न केवल कानून की प्रक्रिया का दुरुपयोग किया है, बल्कि याचिकाकर्ता की स्वतंत्रता से भी वंचित किया है, जिसे अन्यथा कानून के अनुसार ही सीमित किया जा सकता था।

32. इसके विपरीत, राज्य के विद्वान वकील ने प्रस्तुत किया है कि याचिकाकर्ता की ओर से यह आधार लेना गलत है कि धारा 7(ए) के तहत संज्ञान लिया गया है, हालांकि इसे 7(ए) के रूप में लिखा गया है, लेकिन एफआईआर भ्रष्टाचार निवारण (संशोधन) अधिनियम 2018 के तहत शुरू की गई है। अगर धारा 7(ए) का कोई प्रावधान नहीं होता तो मामला अलग होता, लेकिन मामला संशोधित अधिनियम के बाद शुरू किया गया है,

इसलिए धारा 7(ए) इस निष्कर्ष पर पहुंचने में कोई मदद नहीं कर सकती है कि अभियोजन पक्ष का पूरा संस्करण दोषपूर्ण होगा।

33. पक्षों की उपरोक्त दलीलों की पृष्ठभूमि में, इस समय, यह न्यायालय भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के विकास और उद्देश्य तथा प्रासंगिक प्रावधानों पर चर्चा करना उचित समझता है, ताकि इस निष्कर्ष पर पहुंचा जा सके कि याचिकाकर्ता को दोषमुक्त करने का मामला बनता है या नहीं।

34. सबसे पहले, यह ध्यान दिया जा सकता है कि भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 भ्रष्ट गतिविधियों में शामिल व्यक्तियों पर मुकदमा चलाने के लिए रूपरेखा तैयार करता है और समाज के विभिन्न क्षेत्रों में भ्रष्टाचार को रोकने के उपाय प्रदान करता है। जवाबदेही, पारदर्शिता और सख्त कानूनी परिणामों पर जोर देकर, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम भ्रष्टाचार से लड़ने और नैतिक आचरण की संस्कृति को बढ़ावा देने और बनाए रखने के लिए खड़ा है। अधिनियम के मुख्य उद्देश्य भ्रष्टाचार को रोकना, लोक प्रशासन में पारदर्शिता और जवाबदेही को बढ़ावा देना, सख्त दंड लगाकर व्यक्तियों को भ्रष्ट आचरण में शामिल होने से रोकना, मुखबिरों की सुरक्षा करना आदि हैं। यह भ्रष्टाचार के मामलों की जांच और अभियोजन के लिए भी प्रावधान करता है, साक्ष्य एकत्र करने, परीक्षण करने और निष्पक्ष और त्वरित कानूनी प्रक्रिया सुनिश्चित करने की प्रक्रिया को रेखांकित करता है।

35. भ्रष्टाचार निवारण (संशोधन) अधिनियम, 2018 (जिसे इसके बाद संशोधन अधिनियम, 2018 कहा जाएगा) द्वारा भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 को और संशोधित किया गया, ताकि रिश्वतखोरी के अपराध के विवरण और कवरेज में अंतराल को भरा जा सके, ताकि इसे वर्तमान अंतर्राष्ट्रीय प्रथाओं के अनुरूप बनाया जा सके और भ्रष्टाचार के विरुद्ध संयुक्त राष्ट्र सम्मेलन के तहत देश के दायित्वों को अधिक प्रभावी ढंग से पूरा किया जा सके।

36. केंद्र सरकार ने संशोधन अधिनियम, 2018 की धारा (1) की उपधारा (2) द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, दिनांक 26.07.2018 की अधिसूचना के माध्यम से 26

जुलाई 2018 को उक्त संशोधन के प्रावधान लागू होने की तिथि निर्धारित की थी। तदनुसार, संशोधन अधिनियम, 2018 के उक्त प्रावधान 26.07.2018 को लागू हुए।

37. संशोधन अधिनियम, 2018 द्वारा, कई प्रावधानों को, विशेष रूप से पीसी अधिनियम, 1988 में धारा 7, 8, 9, 10 और 13 के अंतर्गत वर्णित अपराधों को नए प्रावधानों के साथ प्रतिस्थापित किया गया; तथा धारा 7ए, 17ए, 18ए, 29ए आदि जैसे कई नए प्रावधान सम्मिलित किए गए। अधिनियम के अंतर्गत अपराधों के दंड से संबंधित कुछ प्रावधानों में भी संशोधन किया गया।

38. चूंकि वर्तमान अपील में शामिल मुख्य मुद्दा नए सम्मिलित प्रावधान धारा 7 और 7-ए के निहितार्थ के संबंध में है, इसलिए यह न्यायालय उपरोक्त धाराओं विशेष रूप से संशोधित धारा 7-ए के मूल और दायरे पर चर्चा करना उचित समझता है।

39. संदर्भ की सुविधा के लिए, भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 की धारा 7 और 7-ए नीचे पुन: प्रस्तुत की गई है: -

> *"7. लोक सेवक को रिश्वत दिए जाने से संबंधित अपराध। - कोई भी लोक सेवक जो, - (क) किसी व्यक्ति से अनुचित लाभ प्राप्त करता है, स्वीकार करता है या प्राप्त करने का प्रयास करता है, इस आशय से कि वह लोक कर्तव्य का अनुचित या बेईमानी से पालन करे या स्वयं या किसी अन्य लोक सेवक द्वारा ऐसे कर्तव्य का पालन करने से रोके या रोके जाने का कारण बने;*
>
> *(ख) किसी व्यक्ति से किसी लोक कर्तव्य के अनुचित या बेईमानी से पालन के लिए या स्वयं या किसी अन्य लोक सेवक द्वारा ऐसे कर्तव्य का पालन करने से परहेज करने के लिए पुरस्कार के रूप में अनुचित लाभ प्राप्त करता है, स्वीकार करता है या प्राप्त करने का प्रयास करता है; या*
>
> *(ग) किसी व्यक्ति से अनुचित लाभ लेने की प्रत्याशा में या उसके परिणामस्वरूप किसी अन्य लोक सेवक को अनुचित रूप से या बेईमानी से लोक कर्तव्य निभाने या ऐसे कर्तव्य के पालन से विरत रहने के लिए प्रेरित करेगा, वह कारावास से,*

जिसकी अवधि तीन वर्ष से कम नहीं होगी किन्तु जो सात वर्ष तक की हो सकेगी, दण्डनीय होगा और जुर्माने से भी दण्डनीय होगा।

स्पष्टीकरण 1.--इस धारा के प्रयोजन के लिए, अनुचित लाभ प्राप्त करना, स्वीकार करना या प्राप्त करने का प्रयास करना स्वयं अपराध माना जाएगा, भले ही लोक सेवक द्वारा लोक कर्तव्य का पालन अनुचित न हो या अनुचित न रहा हो।

स्पष्टीकरण 2.-- इस धारा के प्रयोजन के लिए,-- (i) "प्राप्त करता है" या "स्वीकार करता है" या "प्राप्त करने का प्रयास करता है" पदों के अंतर्गत वे मामले आएंगे जहां कोई व्यक्ति लोक सेवक होते हुए, लोक सेवक के रूप में अपने पद का दुरुपयोग करके या किसी अन्य लोक सेवक पर अपने व्यक्तिगत प्रभाव का प्रयोग करके; या किसी अन्य भ्रष्ट या अवैध तरीके से, अपने लिए या किसी अन्य व्यक्ति के लिए कोई अनुचित लाभ प्राप्त करता है या "स्वीकार करता है" या प्राप्त करने का प्रयास करता है; (ii) यह महत्वहीन होगा कि ऐसा व्यक्ति लोक सेवक होते हुए अनुचित लाभ को सीधे या किसी तीसरे पक्ष के माध्यम से प्राप्त करता है या स्वीकार करता है या प्राप्त करने का प्रयास करता है।

7-ए. भ्रष्ट या अवैध साधनों द्वारा या व्यक्तिगत प्रभाव का प्रयोग करके लोक सेवक को प्रभावित करने के लिए अनुचित लाभ लेना-- जो कोई किसी अन्य व्यक्ति से अपने लिए या किसी अन्य व्यक्ति के लिए कोई अनुचित लाभ भ्रष्ट या अवैध साधनों द्वारा या अपने व्यक्तिगत प्रभाव का प्रयोग करके किसी लोक सेवक को किसी लोक कर्तव्य का अनुचित या बेईमानी से पालन करवाने या करवाने के लिए प्रेरित करने के लिए अथवा ऐसे लोक सेवक या किसी अन्य लोक सेवक द्वारा ऐसे लोक कर्तव्य का पालन न करवाने या न करवाने के लिए प्रेरणा या पुरस्कार के रूप में स्वीकार करता है या प्राप्त करने का प्रयास करता है, वह कारावास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष से कम नहीं होगी किन्तु जो सात वर्ष तक की हो सकेगी, दण्डनीय होगा और जुर्माने से भी दण्डनीय होगा।

40. उपर्युक्त धाराओं की व्याख्या करने से पहले माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा समय-समय पर प्रतिपादित वैधानिक व्याख्या के मूल सिद्धांतों को दोहराना उद्देश्यपूर्ण होगा।

क़ानून की व्याख्या का यह सर्वविदित नियम है कि न्यायालयों को अधिनियम के किसी भी प्रावधान की व्याख्या करते समय उस उद्देश्य को देखना चाहिए जिसे क़ानून प्राप्त करना चाहता है। अधिनियम के आशय और उद्देश्य को उसका पूरा प्रभाव दिया जाना चाहिए और क़ानून में प्रयुक्त किसी भी अभिव्यक्ति की व्याख्या करते समय पूरे अधिनियम के पाठ और संदर्भ को देखा जाना चाहिए।

41. इसके अलावा, कानून का यह स्थापित प्रस्ताव है कि यदि दो दृष्टिकोण संभव हैं, तो वह दृष्टिकोण जो अधिनियम के उद्देश्य के लिए सबसे अधिक अनुकूल है, और जो अधिनियम को व्यावहारिक बनाता है, वह आवश्यक रूप से नियंत्रक दृष्टिकोण होना चाहिए। **सुब्रमण्यम स्वामी बनाम मनमोहन सिंह (2012) 3 एससीसी 64** के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने स्पष्ट रूप से टिप्पणी की है कि पीसी अधिनियम में किसी प्रावधान के दो संभावित निर्माणों के मामले में, न्यायालय का यह कर्तव्य होगा कि वह भ्रष्टाचार को समाप्त करने वाले को स्वीकार करे, न कि उसे बनाए रखने वाले को।

42. इसके अलावा, दंड विधान भी न केवल अपनी शाब्दिक भाषा से, बल्कि संसद द्वारा प्राप्त किए जाने वाले उद्देश्य से भी शासित होते हैं। भले ही विधान में प्रयुक्त शब्द स्पष्ट और सुस्पष्ट हों, फिर भी उनकी व्याख्या इस तरह से की जानी चाहिए जो विधान के अन्य प्रावधानों के संदर्भ में फिट हो और विधानमंडल की वास्तविक मंशा को सामने लाए।

43. इस प्रकार, जबकि भावी क़ानून अपने अधिनियमन की तिथि से नए अधिकार प्रदान करते हुए संचालित होता है, पूर्वव्यापी क़ानून पीछे की ओर संचालित होता है और मौजूदा कानूनों के तहत प्राप्त निहित अधिकारों को छीन लेता है या उन्हें नष्ट कर देता है। पूर्वव्यापी क़ानून वह होता है जो पूर्वव्यापी रूप से संचालित नहीं होता है, हालाँकि घटनाओं या लेन-देन की स्थिति और प्रकृति के आधार पर, क़ानून के संचालन को उसके अधिनियमन से पहले की तिथि से बढ़ाया या प्रभावी किया जाता है। जहाँ तक संशोधन अधिनियम, 2018 का संबंध है, इसे विशेष रूप से इसकी अधिसूचना की तिथि अर्थात 26.07.2018 से लागू किया गया है।

44. इसी प्रकार, पीसी अधिनियम 1988 की धारा 7 को मात्र पढ़ने से, यह किसी भी ऐसे लोक सेवक पर लागू हो सकता है जो किसी व्यक्ति से अनुचित लाभ प्राप्त करता है, स्वीकार करता है या प्राप्त करने का प्रयास करता है, इस आशय से कि वह लोक कर्तव्य का अनुचित या बेईमानी से पालन करे या स्वयं या किसी अन्य लोक सेवक द्वारा ऐसे कर्तव्य का पालन करने से मना करे या मना कराए; या किसी व्यक्ति से लोक कर्तव्य के अनुचित या बेईमानी से पालन के लिए या स्वयं या किसी अन्य लोक सेवक द्वारा ऐसे कर्तव्य का पालन करने से मना करने के लिए पुरस्कार के रूप में अनुचित लाभ प्राप्त करता है, स्वीकार करता है या प्राप्त करने का प्रयास करता है; या किसी व्यक्ति से अनुचित लाभ स्वीकार करने की प्रत्याशा में या उसके परिणामस्वरूप किसी अन्य लोक सेवक को अनुचित या बेईमानी से लोक कर्तव्य का पालन करने या ऐसे कर्तव्य का पालन करने से मना करने के लिए प्रेरित करता है, तो उसे कम से कम तीन वर्ष के कारावास से, जो सात वर्ष तक का हो सकेगा, दण्डित किया जाएगा और वह जुर्माने से भी दण्डनीय होगा।

45. स्पष्टीकरण-I धारा 7 के दायरे को और विस्तृत करता है जो यह प्रावधान करता है कि इस धारा के प्रयोजन के लिए, अनुचित लाभ प्राप्त करना, स्वीकार करना या प्राप्त करने का प्रयास करना अपने आप में एक अपराध होगा, भले ही लोक सेवक द्वारा सार्वजनिक कर्तव्य का पालन अनुचित न हो या न रहा हो। स्पष्टीकरण-II आगे यह प्रावधान करता है कि इस धारा के प्रयोजन के लिए, "प्राप्त करना" या "स्वीकार करना" या "प्राप्त करने का प्रयास करना" जैसे पद उन मामलों को कवर करेंगे, जहां कोई व्यक्ति लोक सेवक होते हुए, लोक सेवक के रूप में अपने पद का दुरुपयोग करके या किसी अन्य लोक सेवक पर अपने व्यक्तिगत प्रभाव का उपयोग करके; या किसी अन्य भ्रष्ट या अवैध तरीके से, अपने लिए या किसी अन्य व्यक्ति के लिए कोई अनुचित लाभ प्राप्त करता है या "स्वीकार करता है" या प्राप्त करने का प्रयास करता है, और यह महत्वहीन होगा कि ऐसा व्यक्ति लोक सेवक होते हुए सीधे या किसी तीसरे पक्ष के माध्यम से अनुचित लाभ प्राप्त करता है या स्वीकार करता है या प्राप्त करने का प्रयास करता है।

46. स्पष्टीकरण I और II के मात्र अवलोकन से यह स्पष्ट है कि अनुचित लाभ स्वीकार करना या प्राप्त करने का प्रयास करना अपने आप में एक अपराध होगा। इसके अलावा,

"प्राप्त करना" या "स्वीकार करना" या "प्राप्त करने का प्रयास करना" जैसे शब्दों में वे मामले शामिल होंगे, जहाँ कोई व्यक्ति लोक सेवक होते हुए, अपने लिए या किसी अन्य व्यक्ति के लिए, लोक सेवक के रूप में अपनी स्थिति से या किसी अन्य लोक सेवक पर अपने व्यक्तिगत प्रभाव का उपयोग करके; या किसी अन्य भ्रष्ट या अवैध तरीके से कोई अनुचित लाभ प्राप्त करता है या "स्वीकार करता है" या प्राप्त करने का प्रयास करता है, और यह मायने नहीं रखता कि ऐसा व्यक्ति लोक सेवक होते हुए अनुचित लाभ सीधे या किसी तीसरे पक्ष के माध्यम से प्राप्त करता है या स्वीकार करता है या प्राप्त करने का प्रयास करता है।

47. इस प्रकार, यह सुरक्षित रूप से निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि धारा 7 और 7A एक दूसरे से स्वतंत्र हैं, लेकिन धारा 7A को अपराध के सहायकों और दुष्प्रेरक तक पहुँचने के एकमात्र उद्देश्य से शामिल किया गया है। इसलिए, यह सभी व्यक्तियों पर लागू होता है, चाहे वे लोक सेवक हों या न हों। हालाँकि, जहाँ रिश्वत लेने वाला व्यक्ति लोक सेवक है, उस पर आरोप लगाने की धारा पीसी अधिनियम 1988 की धारा 7 है, और किसी निजी व्यक्ति के लिए, धारा 7A लागू होगी। इसलिए, धारा 7A अधिकारियों को किसी निजी व्यक्ति के खिलाफ कार्रवाई शुरू करने के लिए व्यापक शक्ति प्रदान करती है, जिसका अर्थ है कि लोक सेवक की संलिप्तता एफआईआर दर्ज करने के लिए एक शर्त नहीं है।

48. इसके अतिरिक्त अधिनियम की धारा 3 केन्द्र या राज्य सरकार को, राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, मामलों की सुनवाई के लिए विशेष न्यायाधीशों की नियुक्ति करने का अधिकार देती है, जैसा कि उसमें निर्दिष्ट किया जा सकता है, अर्थात्:

(1) अधिनियम के अंतर्गत दंडनीय कोई अपराध; और

(2) कोई षड्यंत्र करना या कोई प्रयास करना या कोई

खंड (क) में निर्दिष्ट अपराधों का दुष्प्रेरण।

49. भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 4(3) के अंतर्गत, किसी मामले की सुनवाई करते समय, विशेष न्यायाधीश भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम की धारा 3 के अंतर्गत

निर्दिष्ट अपराध के अलावा किसी अन्य अपराध की (बी) किसी भी प्रकार की साजिश या अपराध करने का कोई प्रयास या कोई भी खंड (ए) में निर्दिष्ट अपराधों का दुष्प्रेरण।सुनवाई कर सकता है, जिसके लिए अभियुक्त पर दंड प्रक्रिया संहिता के अंतर्गत उसी सुनवाई में आरोप लगाया जा सकता है।

50. दोनों प्रावधानों को एक साथ पढ़ने से यह बात पूरी तरह स्पष्ट हो जाएगी कि विधानमंडल ने भारतीय दंड संहिता की धारा की सहायता से न केवल मुख्य कर्ताओं, बल्कि षड्यंत्रकारियों, दुष्प्रेरक और सहयोगियों को भी अपने दायरे में लाने के लिए पर्याप्त व्यापक जाल बिछाया है। यहां तक कि एक व्यक्ति जो लोक सेवक नहीं है, वह भी इसके दायरे में आ जाएगा, यदि प्रत्यक्ष या परिस्थितिजन्य साक्ष्य के आधार पर अपराध में उसकी संलिप्तता दुष्प्रेरक के रूप में सामने आती है।

51. अब इस मामले के तथ्यों पर गौर करें तो अभियोजन पक्ष के मामले से यह स्पष्ट है कि एफआईआर में इस याचिकाकर्ता की भूमिका यह है कि उसने रिश्वत की राशि प्राप्त की थी जिसे कन्हाई राम (संबंधित ब्लॉक के राजस्व कर्मचारी) ने उसे सौंपा था जो मुख्य आरोपी है। इस बात की संभावना हो सकती है कि इस याचिकाकर्ता ने सरकारी कर्मचारी के साथ साजिश के तहत यह राशि प्राप्त की हो। यह भी रिकॉर्ड में है कि याचिकाकर्ता को सभी औपचारिकताएं पूरी करने के बाद मौके पर ही पुलिस ट्रैप द्वारा गिरफ्तार किया गया था।

52. वर्तमान मामले में, रिकॉर्ड से यह स्पष्ट है कि प्रतिवादी के अनुसार, राजस्व कर्मचारी कन्हाई राम के खिलाफ शिकायत की गई थी और धारा 7 की सहायता से एफआईआर दर्ज की गई थी। चूंकि रिकॉर्ड पर मौजूद सामग्रियों के अनुसार याचिकाकर्ता एक निजी व्यक्ति है जिसे मुख्य आरोपी का सहयोगी बताया गया है जिसने मुख्य आरोपी से रिश्वत की राशि स्वीकार की है, इसलिए प्रथम दृष्टया यह मामला बनाने के लिए पर्याप्त सामग्री है कि याचिकाकर्ता ने आपराधिक कृत्य को अंजाम देने में मुख्य आरोपी की मदद की।

53. इसके अलावा रिकॉर्ड से यह स्पष्ट है कि कथित अपराध 12.09.2022 को किया गया था, जो कि नए प्रावधान 7-ए के सम्मिलित होने के काफी बाद का है, जो 26.07.2018 से प्रभावी है।

54. हालांकि, इस मामले के तथ्यों से पता चलता है कि पैसे का लेन-देन हुआ है। इससे प्रथम दृष्टया यह आभास होता है कि घटना के समय मुख्य आरोपी कन्हाई राम द्वारा शिकायतकर्ता से पैसे की मांग, वर्तमान याचिकाकर्ता के साथ मिलकर रची गई एक सुनियोजित साजिश के तहत की गई होगी, ताकि खुद के लिए अनुचित लाभ प्राप्त किया जा सके, जो भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम, 1988 की धारा 7ए के दायरे में भी आता है।

55. इस न्यायालय का दृढ़ मत है कि भ्रष्टाचार के प्रति शून्य सहिष्णुता प्रणाली आधारित और नीति संचालित, पारदर्शी और उत्तरदायी शासन सुनिश्चित करने के लिए सर्वोच्च प्राथमिकता होनी चाहिए। भ्रष्टाचार को समाप्त नहीं किया जा सकता है, लेकिन एकाधिकार को कम करके और निर्णय लेने में पारदर्शिता को सक्षम करके रणनीतिक रूप से कम किया जा सकता है। हालाँकि, भ्रष्टाचार मुक्त समाज को प्राप्त करने के लिए राष्ट्र निर्माण के लिए सामाजिक और नैतिक ताने-बाने को मजबूत करना दीर्घकालिक नीति का एक अभिन्न अंग होना चाहिए।

56. भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई को आगे बढ़ाने के लिए इस कानून के प्रावधानों की व्यापक व्याख्या की जानी चाहिए और इस अधिनियम के दायरे को अधिकतम तक बढ़ाया जाना चाहिए। भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम के तहत अपराध न केवल सरकारी कर्मचारी के खिलाफ बल्कि निजी व्यक्ति के खिलाफ भी लगाए जा सकते हैं।

57. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **गुजरात राज्य बनाम मनसुखभाई कांजीभाई शाह के मामले में, जो 2020 एससीसी ऑनलाइन एससी 412** में रिपोर्ट किया गया है, यह देखकर प्रसन्नता हुई है जो इस प्रकार है: -

> *"...आज, हमारे देश में भ्रष्टाचार न केवल संवैधानिक शासन की अवधारणा के लिए गंभीर खतरा है, बल्कि यह भारतीय लोकतंत्र और कानून के शासन की नींव को भी खतरे में डालता है। हमारे सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार की भयावहता समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक गणराज्य की अवधारणा के साथ असंगत है। इस बात पर विवाद नहीं किया जा सकता कि जहां भ्रष्टाचार शुरू होता है, वहां सभी अधिकार समाप्त हो जाते हैं। भ्रष्टाचार मानव अधिकारों का अवमूल्यन करता*

है, विकास को रोकता है और न्याय, स्वतंत्रता, समानता, भाईचारे को कमजोर करता है जो हमारे प्रस्तावना के दृष्टिकोण में मूल मूल्य हैं। इसलिए, न्यायालय का कर्तव्य है कि किसी भी भ्रष्टाचार विरोधी कानून की व्याख्या और कार्यान्वयन इस तरह से किया जाए कि भ्रष्टाचार के खिलाफ लड़ाई को मजबूत किया जा सके। यानी ऐसी स्थिति में जहां दो निर्माण पूरी तरह से उचित हों, न्यायालय को एक को स्वीकार करना होगा जो भ्रष्टाचार को खत्म करने की कोशिश करता है और दूसरे को जो इसे कायम रखने की कोशिश करता है।"

58. जैसा भी हो, ऊपर की गई चर्चा के आधार पर, यह ध्यान देने योग्य है कि इस स्तर पर डिस्चार्ज याचिका पर सुनवाई करते समय न्यायनिर्णयन का दायरा सीमित है और आरोप तय करने के लिए सामग्री पर विचार करते समय यह एक छोटा परीक्षण नहीं बन सकता है। इस स्तर पर सामग्री का कोई विस्तृत मूल्यांकन या संभावित बचावों पर सावधानीपूर्वक विचार करने की आवश्यकता नहीं है।

59. इसके अलावा, इस न्यायालय का यह भी मानना है कि इस पुनरीक्षण याचिका में उठाए गए मुद्दे अभियुक्त/याचिकाकर्ता के बचाव का हिस्सा हैं, जिन पर सुनवाई के दौरान विचार किया जा सकता है, न कि इस चरण में। प्रथम दृष्टया आरोप तय करने के लिए पर्याप्त सामग्री मौजूद है और इस न्यायालय को दिनांक 15.09.2023 के विवादित आदेश में कोई अवैधता या अनौचित्य नहीं लगता है।

60. इसके परिणामस्वरूप और ऊपर की गई चर्चा के आधार पर, यह न्यायालय इस विचाराधीन निष्कर्ष पर पहुंचा है कि विद्वान निचली अदालत द्वारा याचिकाकर्ता को आरोपमुक्त करने से इंकार करने वाले पारित आदेश में हस्तक्षेप करने के लिए प्रस्तुत आधार में कोई सार नहीं है और तदनुसार इसे खारिज किया जाता है।

61. परिणामस्वरूप, तत्काल आपराधिक पुनरीक्षण आवेदन खारिज किया जाता है।

62. आपराधिक पुनरीक्षण खारिज होने के परिणामस्वरूप, लंबित अंतरिम आवेदन, यदि कोई हो, का भी निपटारा हो जाता है।

63. आदेश जारी करने से पूर्व यह स्पष्ट किया जाता है कि इस न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए निष्कर्ष केवल उन्मोचन के मामले से निपटने के प्रयोजन तक ही सीमित हैं, और इस प्रकार, इस न्यायालय द्वारा दर्ज किए गए किसी भी निष्कर्ष या परीक्षण के दौरान की गई टिप्पणियों से विचारण न्यायालय पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा।

(सुजीत नारायण प्रसाद, जे.)

सौरभ/-

एएफआर

अनुवादक : एडवोकेट मधु कुमारी